# कैसे सीखते हैं बच्चे

जॉन होल्ट

अनुवादः सुशील जोशी

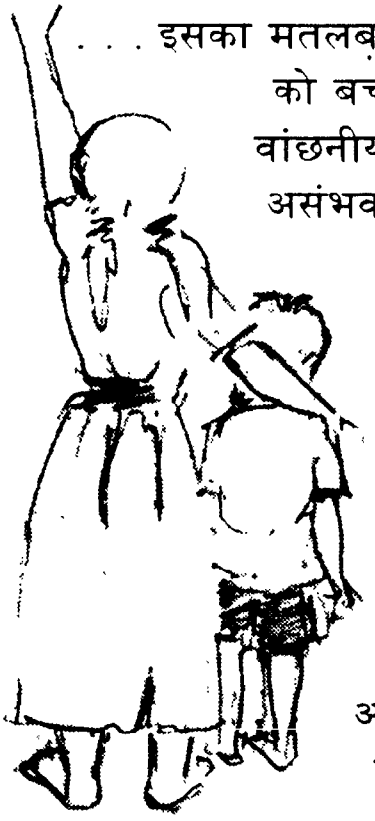

. . . इसका मतलब यह नहीं कि हमें अपने बेहतर ज्ञान व दक्षता को बच्चों से छिपाकर रखना चाहिए, ऐसा करना वांछनीय भी नहीं है और अगर वांछनीय हो तो भी असंभव है। परन्तु हमें इस बात के लिए सचेत रहना चाहिए कि उनका अज्ञान व अनाड़ीपन उनके लिए प्रायः पीड़ादाई होता है। इसलिए हमें सावधानी बरतनी चाहिए कि उनकी कमज़ोरियों में उनकी नाक न रगड़वाएं। कई पालक सब कुछ बड़े अच्छे से कर लेते हैं, मगर इसका मतलब यह नहीं कि वे अपने बच्चों के लिए अच्छे उदाहरण भी हों। कई बार ऐसे बच्चों को लगता है कि चूंकि वे अपने पालकों जैसे दक्ष होने की उम्मीद ही नहीं कर सकते तो कोशिश ही क्यों की जाए?. . .

साढ़े तीन साल की उम्र में लिज़ा एक बड़े परिवार की सबसे छोटी सदस्य थी। इस परिवार के सभी लोगों को पढ़ने और किताबों का शौक था। किताबें घर में हर जगह होती थीं – मेज़ों पर, कुर्सियों पर, बिस्तरों पर, फर्श पर, हर जगह। फिर भी परिवार पढ़ने को लेकर काफी सहज था; किसी भी बच्चे को पढ़ने के लिए ठेला नहीं गया था और लिज़ा को भी ठेलने की कोशिश कोई नहीं करता था। लिहाज़ा एक दिन जब उसने आक्रामक ढंग से कहा कि, "मैं पढ़ सकती हूं!" तो मैं भौंचक्का रह गया। आश्चर्यचकित होकर मैंने कहा, "तो मैंने कब कहा कि तुम नहीं पढ़ सकती?" उसे ललकारने में कोई सार नहीं था। उसे पता था कि वह नहीं पढ़ सकती, उसे यह भी पता था कि मैं जानता हूं कि वह नहीं पढ़ सकती। ज़ाहिर है कि यह बात उसे बहुत अपमानजनक महसूस होती थी कि वह एक ऐसा काम नहीं कर सकती है जो उसके आसपास के सभी लोग – उसकी जानकारी के मुताबिक तो पूरी दुनिया के लोग कर सकते थे। उसके इस अहसास को बढ़ाया क्यों जाए?

कई साल बाद एक दोस्त ने मुझे अपनी बिटिया की कहानी सुनाई। तब वह एक साल की भी नहीं थी। उसके पास प्लास्टिक की एक छोटी सी सीटी थी, जिसे बजाना उसे बहुत अच्छा लगता था।

यह उसका प्रिय खिलौना था। एक दिन उसके माता पिता में से एक ने वह सीटी उठाई और यह देखकर कि उसमें रिकॉर्डर की तरह छेद बने हुए हैं – उन्होंने उस पर एक धुन बजाना शुरू कर दिया। थोड़ी देर तक तो माता पिता ने सीटी का आनंद लिया और फिर बिटिया को सीटी लौटा दी। यह देखकर वे आश्चर्य में डूब गए कि उसने उसे एक तरफ सरका दिया। उसके बाद से उसने एक बार भी सीटी को नहीं बजाया।

इस कहानी ने मुझे डैनी की याद दिला दी। वह तब ढाई साल का था। मुझे लगा कि उसे कुज़िनेयर तीलियां पसंद आएंगी। मैं यह भी देखने को उत्सुक था कि वह इन तीलियों के साथ क्या करेगा। तो एक दिन जब मैं उसके माता-पिता से मिलने गया तो अपने साथ

तीलियों का एक डिब्बा भी ले गया। हमने डिब्बा खोलकर उसे तीलियां दिखाईं। वह उन्हें देखकर मंत्रमुग्ध हो गया। जिस तरह आदिम लोगों के लिए कांच के मोती होते होंगे, ठीक उसी तरह उसे ये सैंकड़ों चमकीली रंगबिरंगी तीलियां दुनिया की सच्ची संपदा नज़र आ रही थीं। हमने डिब्बे को गद्दे पर उलटकर खाली कर दिया। थोड़ी देर तक तो वह उसी तरह बैठा रहा, तीलियों को अपनी उंगलियों पर से फिसलता देखता रहा। वह खुशी और रोमांच में डूबा हुआ था और ऐसा लग रहा था कि किस्से कहानियों का कोई कंजूस अपना धन लिए बैठा हो।

आज मैं जानता हूं कि मुझे करना तो यह चाहिए था कि उसे इन तीलियों से अपने ढंग से खेलने देता, अपने ढंग से आनंद प्राप्त करने देता, उसे अपनी आंखों और उंगलियों से इनके बारे में जानकारी प्राप्त करने देता, धीरे-धीरे इनकी संभावनाएं तलाशने देता। परंतु उस समय मुझे ऐसा लगा कि मुझे उसे कुछ 'सीखने' को प्रेरित करना चाहिए। सो अपने ढंग से, बिना यह तक कहे कि 'देखो', मैंने कुछ तीलियां उठाईं और उन्हें फर्श पर एक पैटर्न में जमाना शुरू कर दिया — मैंने सोचा कि वह मेरी नकल करेगा। डैनी के पिता भी मेरी मदद करने लगे, जल्दी ही हमने एक आसान-सा ढांचा खड़ा कर दिया। हमारा ख्याल था कि डैनी बड़ी आसानी से इसकी नकल कर सकेगा। इसे पूरा करके हमने उसकी ओर देखा। वह थोड़ी देर तक भावशून्य होकर हमारी ओर देखता रहा, फिर बिना एक लफ्ज़ भी बोले आगे बढ़ा और एक हाथ से इमारत को गद्दे पर ढहा दिया। हक्के-बक्के होकर हमने पूछा, "तुमने ऐसा क्यों किया?" वह बस हमारी ओर देखता रहा। मूर्खों की तरह हम अड़े रहे और फिर से एक इमारत बना दी। उसने एक बार फिर से उसे तहस नहस कर दिया। वह नाराज़ नहीं बल्कि दृढ़ दिख रहा था। हमने एक कोशिश और की, लेकिन उसका नतीजा भी वही रहा। अंततः हमें यह समझ आने लगा कि कुछ ऐसा हो रहा है जो हम नहीं समझ पा रहे हैं। और हमने डैनी को अपने ढंग से खेलने के लिए छोड़ दिया।

यह तो सही है कि बच्चों को ऐसे व्यक्तियों से बहुत प्रेरणा और सीखने में मदद मिलती है जो चीज़ों को उनसे बेहतर ढंग से कर सकें। ऐसे व्यक्तियों को प्रायः 'योग्यता के मॉडल' कहते हैं। परन्तु यह

बात हमें ध्यान में रखनी चाहिए कि यह योग्यता का मॉडल कभी कभार कुछ ज़्यादा ही योग्य होता है। बाल मनोविज्ञान के विशेषज्ञ 'शिशु शक्तिमत्ता' के बारे में काफी कुछ लिखते रहते हैं। उनका सिद्धांत यह लगता है कि शिशु और छोटे बच्चे सचमुच यह मानते हैं कि वे सब कुछ कर सकते हैं। बड़े होते हुए धीरे-धीरे ही वह सीखते हैं कि वे कितना कम कर सकते हैं। मैं इसे सही नहीं मानता, शिशुओं के लिए भी नहीं। मुझे यकीन है कि यह बात दो-तीन साल के बच्चों के बारे में भी सही नहीं है। वे भलीभांति जानते हैं कि वे कितना कम जानते हैं, कितना कम समझते हैं या कर सकते हैं। और यह अहसास कई मर्तबा उनके लिए काफी डरावना और अपमानजनक होता है।

इसका मतलब यह नहीं कि हमें अपने बेहतर ज्ञान व दक्षता को बच्चों से छिपाकर रखना चाहिए, ऐसा करना वांछनीय भी नहीं है और अगर वांछनीय हो तो भी असंभव है। परन्तु हमें इस बात के लिए सचेत रहना चाहिए कि उनका अज्ञान व अनाड़ीपन उनके लिए प्रायः पीड़ादाई होता है। इसलिए हमें सावधानी बरतनी चाहिए कि उनकी कमज़ोरियों में उनकी नाक न रगड़वाएं। कई पालक सब कुछ बड़े अच्छे से कर लेते हैं, मगर इसका मतलब यह नहीं कि वे अपने बच्चों के लिए अच्छे उदाहरण भी हों। कई बार ऐसे बच्चों को लगता है कि चूंकि वे अपने पालकों जैसे दक्ष होने की उम्मीद ही नहीं कर सकते तो कोशिश ही क्यों की जाए?

यही बात शिक्षकों के बारे में भी कही जाती है। बच्चे अपने से थोड़े बड़े बच्चों से काफी कुछ सीख पाते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि थोड़े बड़े बच्चे उन्हीं की भाषा में बात कर पाते हैं। इसका एक कारण यह हो सकता है कि बड़ा बच्चा कहीं ज़्यादा मददगार 'योग्यता मॉडल' होता है क्योंकि वह अपनी पहुंच में दिखता है। इसमें कोई शक नहीं कि किसी बच्चे की रुचि एथलेटिक्स या संगीत या नृत्य में है तो कभी-कभार, एकाध बार उत्कृष्ट वयस्कों को यह चीज़ें करते देखना काफी रोमांचक व प्रेरणादायक होगा। परन्तु रोज़मर्रा के अनुकरण के लिए यह विशेषज्ञ अपेक्षाकृत कम उपयोगी होते हैं; ज़्यादा उपयोगी होते हैं थोड़े बड़े बच्चे जो किसी भी चीज़ को छोटे बच्चों के मुकाबले थोड़ा बेहतर कर पाएं। स्कूल में मेरी

बांसुरी की बनिस्बत मेरे बिगुल को कहीं ज़्यादा बच्चे बजाकर देखना चाहते थे। उस समय तो मैंने सोचा नहीं था, लेकिन आज लगता है कि इसका कारण यह रहा होगा कि बांसुरी पर तो मैं विशेषज्ञ था लेकिन बिगुल पर उनकी तरह ठेठ नौसिखिया।

बहरहाल लिज़ा की बात पर लौटें। सबसे पहले लिज़ा ने ही मुझे यह बात सिखाई थी या यूं कहें कि उसने ही मेरी आंखें खोल दी थीं। तब वह चार साल की थी। मैं एक दिन उसके घर गया था। पढ़ने में उसकी रुचि का मुझे पता था। सो, मैं कुछ ऐसी सामग्री साथ लेता गया जिसका उपयोग मैं स्कूल में पढ़ना सिखाने के लिए करता था – ये कुछ चार्ट थे जिनका संबंध 'शब्द रंगों में' (Words In Colour) नामक विधि से था। इस समय तक मैं इतना तो समझ ही चुका था कि इस सामग्री को ज़बर्दस्ती थोपने की कोशिश करने का कोई फायदा नहीं है। बच्चे बहुत जल्दी ही सीख जाते हैं कि वयस्कों के अति उत्साह के प्रति सतर्क रहना चाहिए। तो मैंने तत्काल यह नहीं कहा कि "देखो लिज़ा, मैं तुम्हारे लिए कितनी ज़ोरदार चीज़ लाया हूं, देखोगी तो खुशी से उछल जाओगी. . .।" बल्कि मैंने चार्टों को अपने कमरे में छोड़ दिया। मुझे पता था कि जब वह वहां खोजबीन करने जाएगी, तब देख लेगी। और यही हुआ। कुछ दिनों बाद उसने मुझसे पूछा, "तुम्हारे कमरे में पड़े हुए वो बड़े-बड़े चार्ट क्या हैं?" मैंने कहा, "तुम्हारा मतलब वो रंगीन अक्षरों वाले बड़े-बड़े चार्ट?" "हां।" मैंने उसे बताया कि उनका उपयोग स्कूल में उन बच्चों के बीच करता हूं जो अभी पढ़ना सीख रहे हैं। उसने पूछा, "क्या मैं उनका उपयोग कर सकती हूं?" मैंने कहा, "हां, हां ज़रूर, यदि तुम चाहो तो कर सकती हो।" उसने कहा, "मेरा मतलब अभी कर सकती हूं क्या?" तो हम चार्टों को बैठक में ले आए। और कुछ चार्ट फैलाकर शुरू हो गए।

आमतौर पर इनका इस्तेमाल करते वक्त शिक्षक करते यह हैं कि किसी शब्द की ओर इशारा करके पूछते हैं कि वह क्या है। परन्तु अब तंक मैं यह सीख चुका था कि बहुत छोटे बच्चों को भी यदि ऐसी जगह घेर दिया जाए, जहां उन्हें ऐसा उत्तर देना पड़े जो गलत

भी हो सकता है – तो वे बहुत डर जाते हैं, तथा सावधान व रक्षात्मक रुख अपना लेते हैं। मैंने किया यह कि लिज़ा को एक पोंइटर दे दिया और उससे कहा कि वह मुझसे पूछे कि कौन-सा शब्द क्या है, और यदि उसे पता हो, तो वही बता दे। दूसरे शब्दों में, मेरी कोशिश यह थी कि वह खतरे से बाहर रहे तथा खेल का नियंत्रण उसके हाथ में रहे।

कुछ समय तक हम इस तरह खेलते रहे। वह मुझसे शब्द पूछती, मैं बता देता। कभी-कभी उसे वह शब्द पता होता, तो वह बोल देती। मगर थोड़ी ही देर में, चन्द पलों में उसने खेल के नियम बदलना शुरू कर दिए, ताकि खेल को एक अलग ढंग से, अपने ढंग से खेल सके। परिवार के बड़े बच्चों का एक अच्छा दोस्त था, जिसका नाम था हेनरी हैरिसन। लिज़ा उसे जानती थी। अब लिज़ा करने यह लगी कि चार्ट पर किसी भी तीन या चार अक्षरों वाले शब्द की ओर इशारा करके बोलती, "हेनरी हैरिसन!" उसे इसमें खूब मज़ा आ रहा था। मैंने कोशिश की कि खेल वापस पटरी पर आए मगर कोई फायदा न हुआ। ज़ाहिर था कि वह न सिर्फ इस खेल से थक चुकी थी, बल्कि इसे नापसन्द भी करने लगी थी। एकाध मिनट बाद ही उसने कहा कि बस, अब और नहीं खेलना। हमने चार्ट उठाकर रख दिए। उस दिन के बाद से मेरे रहते उसने फिर कभी चार्ट देखने की इच्छा ज़ाहिर नहीं की।

यह एक रहस्य था। मैंने तो काफी सावधानी बरती थी कि उसे कटघरे में खड़ा न होना पड़े। उसने खुद इस सामग्री का उपयोग करने की इच्छा जताई थी। फिर क्यों वह इतनी जल्दी इससे ऊब गई? यही बात कुछ दिनों बाद, किसी अन्य सामग्री के संदर्भ में एक बार फिर हुई। कुछ समय बाद, काफी सोचने के उपरान्त ही मुझे कुछ भान हुआ कि माजरा क्या है। मैं चाहे जितनी कोशिश करता कि यह खेल उसके लिए भयजनक न बने, वह ऐसी जगह न खड़ी की जाए जहां उसे गलत होने का भय सताए, तो भी मैं यह बात नहीं छिपा सकता था कि यह एक ऐसा खेल था जिसके बारे में मैं सब कुछ जानता था और वह कुछ नहीं जानती थी। और यह बात ही इतनी अपमानजनक थी कि इसे बर्दाश्त करने की वह इच्छुक नहीं थी।

मुझे करना यह चाहिए था कि लिजा को उन चार्टों का उपयोग उसकी मर्ज़ी के मुताबिक करने देता, उसे समय देता कि वह (चाहे तो) इनके साथ खेले, कल्पना के घोड़े दौड़ाए, और मुझे दिखाए कि वह इनका क्या उपयोग करना चाहेगी – और चाहे तो इनके बारे में मुझसे सवाल करे। परन्तु यदि मैं और वह ये सब कुछ करते, तो भी मुझे इस बात में संदेह है कि वह इन चार्टों का उपयोग अपने आपको पढ़ना सिखाने के लिए करती, जैसी कि इनके लेखक *गैटेग्नो* की मंशा रही होगी। थोड़े दिनों बाद जब उसने वास्तव में यह काम ( पढ़ना सीखना ) किया, तो उसने सचमुच की किताबों का इस्तेमाल किया।

यह मान लेना एक बहुत बड़ी गलती होगी कि उक्त प्रतिक्रिया असाधारण या अनोखी या अस्वस्थ थी। यह बहुत ही मानवीय प्रतिक्रिया है, जो अमूमन वयस्कों और बच्चों दोनों में होती है। अधिकांश समय हममें से अधिकतर लोग ऐसे व्यक्ति का सामना करना कतई पसंद नहीं करते जो किसी चीज़ के बारे में हमसे बहुत ज़्यादा जानता हो। हालांकि मैंने स्कूली वर्षों में जिस बाल-सदृश कुतूहल को गंवा दिया था उसे काफी हद तक पुनः हासिल कर लिया है। मगर आज भी मुझे अक्सर अपने अन्दर इस प्रतिक्रिया का अहसास होता है। अभी कुछ ही दिन पहले की बात है। बॉस्टन लौटते हुए उड़ान में मुझे दो लोगों के पास बैठने का अवसर मिला जो आधुनिकतम जीव विज्ञान के बारे में जीवन्त चर्चा कर रहे थे। एक ओर तो मैं उनकी कही बातों और उनके बनाए चित्रों को लेकर अपनी रुचि को रोक नहीं पा रहा था। परन्तु जहां मैं उनकी चर्चा में से थोड़ा-बहुत अर्थ समझने की कोशिश कर रहा था, वहीं मेरे दिमाग का दूसरा हिस्सा काफी गुस्से से उनकी बातों के महत्व को नकारने पर तुला था।

अलबत्ता मैं अपने रक्षात्मक विचारों को कमोबेश रोक पाने में सफल रहा और सुनता गया। परन्तु प्रतिक्रिया मौजूद थी और यह लगभग उतनी ही तीव्र थी जितनी तब होती है जब मैं – उदाहरण के लिए – *साइन्टिफिक अमेरिकन* पत्रिका का कोई ऐसा लेख पढ़ता

हूं जो मेरे सिर के ऊपर से निकल जाता है। ये प्रतिक्रियाएं चाहे गर्व का विषय न हों, मगर कुदरती हैं। यहां तक कि अपने दिमाग के अंतःपुर में भी हम अपने आप को अनजान और बेवकूफ मानना स्वीकार नहीं करना चाहते। जब हमारा सामना किसी ऐसी चीज़ से होता है जिसे हम नहीं जानते तो हम यह कहकर अपना बचाव करने लगते हैं कि वह चीज़ जानने के योग्य नहीं है।

आज मैं नहीं मानता कि लिज़ा के मन में यह अहसास था। उसने कदापि यह फैसला नहीं किया था कि पढ़ना सीखने योग्य नहीं है। बल्कि उसकी तो शायद पढ़ना सीखने की बहुत इच्छा थी। उसकी नाराज़गी इस बात पर थी, और सही थी कि मैंने बिन बुलाए ही उसे सिखाने की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ओढ़ ली थी। वह पढ़ना सीखेगी, तो अपनी मर्ज़ी से, अपने समय पर और अपने तरीके से। सीखने में आत्मनिर्भरता (स्वतंत्रता) की यह भावना, सीखने वाले की सबसे कीमती पूंजी है। हम लोग, जो घर पर या स्कूल में बच्चों को सीखने में मदद करना चाहते हैं, उन्हें बच्चों की इस बात का सम्मान करना व इसे प्रोत्साहित करना सीख लेना चाहिए।

स्वाभिमानी व संवेदनशील बच्चे प्रायः इस तरह की प्रतिक्रिया ज़्यादा देते हैं। मैं जानता था कि लिज़ा इसी तरह की बच्ची है। इसीलिए थोड़ा चिन्तित था कि जब वह स्कूल जाएगी और उसे औपचारिक शिक्षक (निर्देशों) के अधीन चलना पड़ेगा, तो पता नहीं क्या होगा। क्या वह इसका प्रतिरोध करेगी? लग रहा था कि शायद करेगी। खुशकिस्मती से उसने खुद ही पढ़ना सीखकर इस समस्या का समाधान कर दिया। कोई नहीं जानता कि उसने यह किया कैसे। वास्तव में यह एक ऐसी चीज़ है जिसके बारे में आमतौर पर हम बहुत कम जानते हैं। हर साल कई हज़ार बच्चे अपने आप पढ़ना सीख जाते हैं। शायद बेहतर होगा कि हम पता करें कि ऐसे कितने बच्चे हैं और उन्होंने अपने आपको कैसे सिखाया।

बहरहाल, लिज़ा एक *किंडरगार्डन* में गई। हालांकि वहां शिक्षक बच्चों को पढ़ना सिखाने या पढ़ने को प्रेरित करने की कोशिश नहीं करते। मगर ढेर सारी किताबें, पोस्टर, अक्षर और अन्य उपयोगी

सामग्री वहां मौजूद है। यहां, ऐसे बच्चों की भीड़ में जो उससे ज़्यादा पढ़ना नहीं जानते थे, लिज़ा ने महसूस किया होगा कि पढ़ना न आना कोई ज़िल्लत नहीं है। आगे चलकर शायद उसने फैसला किया होगा कि चूंकि बड़े लोग पढ़ सकते हैं, इसलिए अवश्य ही उन्होंने पढ़ना सीखा होगा। और यदि वे सीख सकते हैं तो वह भी सीख सकती है। नवंबर के अंत तक वह शुरुआती रीडर और वर्क-बुक घर लाने लगी थी। इनके साथ वह अपने आप कुछ-कुछ करती रहती थी। जब अगली गर्मियों में मैंने उसे देखा, तो वह दूसरी कक्षा या शायद तीसरी कक्षा के स्तर की किताबें पढ़ने लगी थी।

एक दिन मैं और वह दोनों बैठक में बैठे पढ़ रहे थे। सार्वजनिक पुस्तकालय के बच्चों के खण्ड में से वह हाल ही में चार किताबें लाई थी। इससे अधिक संख्या में वहां से किताबें नहीं मिल सकती थीं। उसने उनमें से सबसे रोचक नज़र आने वाली किताब उठा ली और एक बड़ी-सी कुर्सी में बैठकर शुरू हो गई। मुझे उसकी बुदबुदाहट सुनाई पड़ रही थी मगर मैं यह नहीं सुन पा रहा था कि वह कह क्या रही है। उसकी आवाज़ के उतार-चढ़ाव व उसकी चुप्पियों से मुझे यह आभास हुआ कि किताब में कई ऐसे शब्द थे जिन्हें वह जानती थी और देखकर पहचान लेती थी। मगर साथ ही ऐसे शब्द भी थे जिन पर उसे रुकना होता था, अनुमान लगाना होता था। अनुमान लगाने के लिए शायद वह ध्वनि संबंधी अपने थोड़े-बहुत ज्ञान का उपयोग करती थी, या शायद संदर्भ के आधार पर अटकल लगाती थी, या शायद दोनों का मिला-जुला इस्तेमाल करती थी। कुछ शब्दों को छोड़कर आगे बढ़ जाने में भी उसे कोई ऐतराज़ नहीं था। उसे यह ज़रूरी नहीं लगता था कि उसे हर शब्द आना ही चाहिए। परन्तु कभी-कभार वह किसी ऐसे शब्द पर पहुंच जाती जिसका न तो वह अनुमान लगा पाती, न अटकल काम आती और न ही उसे छोड़कर आगे बढ़ पाती।

उस दिन उसे एक ऐसा शब्द मिल गया। धीरे से वह अपनी कुर्सी से उतरी और किताब को पकड़े-पकड़े मेरी ओर आई। मैंने उसकी ओर देखा। उसके चेहरे पर कठोर भाव था। उसने किताब में एक

शब्द की ओर इशारा करके पूछा, "यह क्या है?" उसकी निगाहों में स्पष्ट चेतावनी थी, "मुझसे ऐसे सब सवाल पूछना मत शुरू कर देना कि – 'तुम्हें क्या लगता है कि यह क्या है?' या फिर कि 'क्या तुमने पता लगाने की कोशिश की है?' वगैरह। यदि मैं यह सब कर सकती तो तुमसे पूछने क्यों आती। बस, मुझे इतना बता दो कि यह शब्द क्या है।" मैंने उसे बता दिया। उसने सिर हिलाया, वापस अपनी कुर्सी पर बैठ गई और पढ़ना जारी रखा।

बाद में मैंने उसकी मां से पूछा कि लिज़ा कितनी बार कोई शब्द पूछने आती है। उसकी मां ने थोड़ा सोचकर बताया, "बहुत बार नहीं। शायद हफ्ते में एक-दो बार।" फिर थोड़ा और सोचकर बोली, "हालांकि यह बहुत मज़ेदार बात है कि जब वह कोई शब्द एक बार पूछ लेती है, तो फिर भूलती नहीं।" हां, यह बात मज़ेदार है मगर आश्चर्यजनक नहीं है। जिन चीज़ों के बारे में, अपने व्यक्तिगत कारणों से, हम वास्तव में जानना चाहते हैं, उन्हें हम सीखकर भूलते नहीं हैं। परन्तु यदि वह हफ्ते में सिर्फ एक मर्तबा, या शायद चन्द मर्तबा किसी से कोई शब्द पूछती है, तो ये तो कोई दो सौ शब्द हुए जबकि वह तकरीबन डेढ़ हज़ार शब्द जानती है। तो उसने बाकी के शब्द कहां से सीखे? ज़ाहिर है कि इन्हें उसने अपने आप पता लगाया।

---

**जॉन होल्ट:** दुनिया के जाने माने शिक्षाविद; होल्ट काफी घुमक्कड़ प्रवृत्ति के इंसान थे। शिक्षा होल्ट का शौक था। उन्होंने अपने इस शौक को ही अपना पेशा बनाया।

1964 में उनकी पहली किताब 'हाउ चिल्ड्रन फेल' छपी। यह उनकी डायरी का एक अंश थी। इस डायरी में वे बच्चों के करतबों और हरकतों को दर्ज़ करते जाते थे। इस किताब ने शिक्षा जगत में तहलका मचा दिया।

प्रस्तुत अंश उनकी एक अन्य किताब 'हाउ चिल्ड्रन लर्न' से लिया गया है।

अनुवादक सुशील जोशी पर्यावरण एवं विज्ञान लेखन में स्वतंत्र रूप से सक्रिय हैं; वे एकलव्य के होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से भी संबद्ध हैं।